आश्रम व्यवस्था।

साधना

आश्रम व्यवस्था---मनु की समाज व्यवस्था में व्यक्ति तथा समाज दोनों के जीवन को पूर्ण रूप से नियोजित करने की चेष्टा की गई है |सामाजिक संगठन तथा श्रेयीकरण के लिए परंपरागत भारतीय व्यवस्था में वर्ण प्रणाली को स्वीकार किया गया|व्यक्ति के जीवन की व्यवस्था, विभिन्न, अवस्थाओं में विभिन्न कार्यों के संपादन तथा सामाजिकरण एक नैतिक जीवन यापन की प्रक्रिया के लिए एक व्यक्ति के जीवन का वर्गीकरण चार अवस्थाओं में किया गया और विभिन्न अवस्थाओं के साथ संस्कारों की प्रक्रिया को जोड़कर उसके जीवन को उच्च से उच्चतर स्तर की महत्वपूर्ण ले जाने की चेष्टा की गई|वर्ल्ड तथा आश्रम व्यवस्थाओं के द्वारा व्यक्ति तथा समाज के मध्य उसने वाले संघर्ष को समाप्त कर सामंजस्य स्थापित हुआ|आधुनिक मान्यताओं के प्रकाश में कुछ लोग सोच सकते हैं कि पूर्व अपने अवयवों का संयुक्त मात्र ही है|भारतीय व्यवस्था में अवयव पूर्ण से नि: सृत है|और वह इनका करता है|अतः किसी भी प्रकार के संघर्ष का प्रश्न ही नहीं उठता इन दोनों को धर्म तथा नैतिकता की मान्यताएं एक सूत्र में आबद्ध करती है। डॉ० भगवान दास ने सामाजिक क्रिया, वर्ण तथा आश्रम में संबंध स्पष्ट करने की चेष्टा की है|वर्ण तथा आश्रम का वर्गीकरण सामाजिक क्रियाओं की समुचित पूर्ति तथा संचालन के लिए किया गया है इनको हम निम्न पद्धति से समझ सकते हैं।।

१. शैक्षणिक क्रिया (पठन तथा पाठन) का मुख्य कर्ता ब्राह्मण था और वह मुख्यतः प्रथम आश्रम (ब्रह्मचर्य) मैं ही संपादित होती थी।

२. सुरक्षात्मक व्यवस्था का मुख्य कर्ता क्षत्रिय था और इसका मुख्य संबंध डॉक्टर भगवान दास के अनुसार वानप्रस्थ आश्रम से है।

३. आर्थिक क्रिया तथा व्यवस्था का करता वैश्य था और इसका मुख्य संबंध गृहस्थ आश्रम से था।।

४. उद्योग तथा श्रम मुख्य रूप से शूद्रो से संबंधित तथा इसकी सामाजिक सेवा का पक्ष सन्यास आश्रम से संबंधित है|सन्यासी का काम नि: स्प्रिट भाव से सामाजिक कल्याण तथा सेवा के कार्यों का संपादन था।।

आश्रम का अर्थ-----

व्युत्पत्ति-विचार से 'आश्रम'का अर्थ विश्राम का स्थल है मनु के अनुसार ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ तथा संयास आश्रम व्यवस्था के यही चार मान्य क्रम है इनमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे आश्रम में प्रवेश करने के लिए अपनी नैतिक, शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं का विकास किया है कि इस है|जिससे नये उत्तरदायितवो की पूर्ति में कोई कठिनाई न हो'जावाल उपनिषद'मैं ऐसा भी वर्णन मिलता है कि ब्राह्मण प्रथम आश्रम के उपरांत सीधे सन्यास आश्रम ग्रहण कर सकता|शंकर ने भी इस मत का समर्थन किया है, लेकिन उस मत की इस आधार पर आलोचना हुई है की रीड आश्रम से मुक्ति बिना गृहस्थ आश्रम से मुक्ति असंभव है|अर्थ परिपक्व अवस्था में जब तक व्यक्ति का रजत और तमस पक्ष पूर्णतया नष्ट नहीं हो गया है तथा जीवन के बहुमुखी अनुभवों से वह विज्ञान नहीं है सन्यास आश्रम ग्रहण कर लेना समाज के लिए चिंतन का विषय बन सकता है सामाजिक दृष्टि से इस तर्क को इस प्रकार भी प्रस्तुत किया जा सकता है कि किसी को अपने उत्तरदायित्व से पलायन करने का अधिकार नहीं है मनु का विश्वास है कि आश्रम के नियमों का विधिवत पालन करने के उपरांत ही सन्यास आश्रम ग्रहण करना चाहिए|सभी आश्रमों के कृतियों के समुचित पालन से हो मोक्ष प्राप्ति संभव हो सकती है|कुछ विशेष परिस्थितियों में ब्राह्मण के लिए आजन्म ब्रह्मचर्य (जिसे नास्तिक की संज्ञा दी गई है|) का पालन करते हुए आचार्य के कुल में जीवन यापन मनु के भी मान्य है|यह प्रवृत्ति मनुस्मृति द्वारा प्रोत्साहित नहीं की गई है|गृहस्थ आश्रम पूरे समाज कीआवश्यकताओं की पूर्ति करने वाला आश्रम है|अंतिम दो आश्रम सांसारिक जीवन से क्रमशः विरक्ति के बाद मोक्ष के साथ बढ़ने के चरण है|परंतु अंतिम दो आश्रमों के प्रवेश मात्र से ही मुक्ति संभव नहीं है मुक्ति प्राप्ति के पास सोपान है माया हीनता, काम हीनता, अहंकार हिनता, विषय हीनता का पूर्ण वैराग्य|तथा गृहस्थ आश्रम समुदाय गत अधिक एवं व्यक्तिगत महत्व कम है|इस कारण यह प्रथम दो आश्रम जो सबके लिए अनिवार्य है अंतिम दो आश्रम सर्वदा वैकल्पिक रहे|यदि आश्रम व्यवस्था पर समास तथा व्यक्ति के संबंधों की दृष्टि से विचार किया जाए तो प्रथम आश्रम में समुदाय व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है|गृहस्थ आश्रम में व्यक्ति सामुदायिक तथा कल्याण के कार्यों में तत्पर रहता है|वानप्रस्थ आश्रम में व्यक्ति समाज से अपने संबंध को अधिक अंशो मैं पृथक कर लेता है और अंतिम आश्रम सन्यास में व्यक्ति एक ओर तो अपनी आजीविका के लिए समाज पर आधारित रहता है तथा

दूसरी ओर संपूर्ण मानवता के प्रति ममत्व की भावना तथा कल्याण की कामना के द्वारा वह सामाजिक शुभ कार्यों में भी तल्लीन रहता है|उसके अंतिम उत्थान तथा सामाजिक हित में कोई परस्पर विरोध नहीं रहता है|मुख्यतः उनका संबंध चरम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति से रहता है|तत्कालीन वर्तमान में उसका उद्देश्य संपूर्ण मानवता की निश प्रीत भाव से सेवा है मनु ने ब्रह्मचर्य आश्रम की प्रमुख विशेषता आध्यात्मिक तथा नैतिक प्रशिक्षण को बुद्धि के साथ संयुक्त करना माना है|चारित्रिक पवित्रता का प्रश्न लड़की तथा लड़के के लिए महत्व का था|मनु के अनुसार आचरण की व्यक्तिगत पवित्रता ब्रह्मा के साथ निवास करने के समान है| मनुस्मृति के अनुसार शरीर की शुद्धता के साथ विचार तथा कर्म की पवित्रता भी जीवन के लिए अनिवार्य है सादगी तथा अभाव के इस जीवन में दृष्टिकोण की विशालता, साहचर्य तथा एकता की भावना जीवन तथा जगत के प्रति कर्तव्य परायणता का उदय हो जाना स्वाभाविक है|।

आश्रम तथा आयु-----

मनु तथा दूसरे अन्य सा सरकार आश्रम व्यवस्था की मूल भावना पर तो एकमत है लेकिन इस बात का मतभेद है कि किसी आयु में किसी आश्रम में प्रवेश किया जाए? प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य का उद्देश्य नैतिक, मानसिक तथा शारीरिक क्षमताओं की वृद्धि थे जिससे भावी जीवन धर्म के कृत्यों से समुचित संपादन तथा आनंद की प्राप्ति योग्य बन सके|वेदों के अध्ययन के उपरांत मानसिक तथा शारीरिक परिपक्वता के साथ गृहस्थ आश्रम का काल आरंभ होता था गृहस्थ आश्रम के कृत्यों के संपादन के उपरांत जब धर्म-कर्म सिकुड़ जाए, के श्वेत हो जाए, पौत्रों का मुखदेख ले तब अरण्य वास करते हुए वानप्रस्थ का जीवन व्यतीत करें|सुविधानुसार वानप्रस्थ अपनी पत्नी को पुत्रों के साथ अथवा अपने साथ रख सकता है इसके बाद चतुर्थ आश्रम सन्यास आरंभ होता था|प्रायः आयु को सौ वर्ष मानकर भारतीय शास्त्रकारो ने पच्चिस वर्ष के चार विभाजन किए हैं प्रतीक आश्रम की अवधि इस प्रकार पच्चिस वर्ष है|वात्सायन के कामसूत्र के अनुसार मनुष्य जीवन सतवर्सिय है|इसे बालय, युवा तथा स्थविर इन तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है।

ब्रह्मचर्य आश्रम-----

प्रथम आश्रम ब्रह्मचर्य एक प्रकार से तप और विद्या अध्ययन का काल था तब तथा विद्या के यह दोनों कर्म एक साथ ही चलते थे अतः मनु की समाज व्यवस्था में शिक्षण का क्या स्थान है प्राय: सभी विचारक चाहे पश्चिम के प्लेटो तथा सुकरात हो अथवा भारत में मनु अथवा व्यास, सभी इस तथ्य से सहमत हैं कि संस्कार के बिना स्वभाव का उचित निर्देशन असंभव है|इसी कारण मनु का यह कथन विशेष महत्व रखता है की उपनयन से पूर्व सभी शुद्र है मनु के अनुसार व्यक्ति पर समाज का रीड है ऋषि ऋण से मुक्ति ज्ञान की प्राप्ति एक
विद्या अध्ययन द्वारा ही संभव है|इसी कारण मनु का यह कथन विशेष महत्व रखता है कि उपनयन से पूर्व सभी शुद्र है मनु के अनुसार व्यक्ति पर समाज का रीड है ऋषि ऋण से मुक्ति ज्ञान की प्राप्ति विद्या अध्ययन द्वारा ही संभव है जीवन के आरंभिक वर्षों सामाजिकरण की प्रक्रिया का विशेष महत्व है भारतीय मनीषियों ने प्रथम आश्रम के साथ शिक्षण को जोड़कर सामाजिकरण के पद्धति को नियंत्रित तथा उचित दिशा की ओर निर्देशित किया दूसरी ओर व्यक्ति की आध्यात्मिक पूर्णता की प्राप्ति के लिए एवं दृढ़ आधार निर्मित करने का अवसर प्रदान किया|

गृहस्थ आश्रम-------

गृहस्थाश्रम सभी आश्रमों में श्रेष्ठ है मनु का कथन है कि जिस प्रकार सभी नदियों का विश्राम स्थल महासागर है उसी प्रकार सभी आसनों का आश्रय स्थल गृहस्थाश्रम है महाभारत में इंद्र का कथन है कि गृहस्थ का जीवन अत्यंत उच्च तथा पवित्र है और इसी प्रकार जीवन की सफलता संभव है जो व्यक्ति सुख स्वर्ग तथा अक्षय कीर्ति का अभिलाषी है, के उसे इस आश्रम के नियमों का पालन करना चाहिए|गृहस्थ आश्रम के इस उच्चता के मूल में इसका सामाजिक मूल्य ही है जहां प्रत्येक आश्रम में व्यक्ति के उत्थान पर बल है, इस आश्रम में सामाजिक कल्याण, श्रीजन तथा विकास की योजना है|इस आश्रम में व्यक्ति का समाज से प्रत्यक्ष संबंध रहता है|फल: व्यक्ति समाज को प्रत्यक्ष रूप से कुछ प्रदान करता है गृहस्थ आश्रम को महत्व प्रदान की गई है, उसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है की मनु की व्यवस्था में 'सामाजिक मूल्य' ही सर्वोच्च माने गए हैं|चारो आश्रम चार प्रकार के यज्ञ के समान है प्रथम आश्रम एक प्रकार का ज्ञानयज्ञ है जहां अपने मन, इंद्रियां बुद्धि आदि सब की एकाग्रता के द्वारा विद्यार्थी गुरु के पास ज्ञानार्जन करता है गृहस्थ का जीवन ज्ञान तथा कर्तव्य का एक अनवरत निर्भर है जहां स्वार्थ रहित सेवा, अनुराग, तथा समाज के प्रति कर्तव्य का मधु प्रभावित होता है|प्रथम आश्रम में उपावान ज्ञान का गृहस्थ आश्रम क्रियात्मक प्रयोग स्थल है|इस प्रकार यह एक कर्म यज्ञ की भांति है|

वान प्रस्थ आश्रम तथा सन्यास-----

वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश के उपरांत यह आवश्यक था कि मुनियों के भोजन के अन्य (शाक, मूल,फल आदि) से गृहस्थ के लिए निर्देशित पंच महायज्ञ को पूर्ण करता रहे|हरित ने तो वल्कल की भी आज्ञा दी है|सायंकाल तथा प्रातः काल नियमित रूप से स्नान करें तथा दाढ़ी मूछ और नाखून को ना कटवाए|अपने भोजन में से बलि तथा भिक्षा के कृत्यों को पूरा करें उसी में से आश्रम में अभ्यागतो का सत्कार भी करें|मनु के अनुसार वानप्रस्थ इको वेद अभ्यासी, शीत ,धूप को सहने वाला, उपकार की भावना से पूर्ण, मंकी सतर्कता से युक्त तथा प्राणियों पर दया वाला होना चाहिए|वानप्रस्थ के लिए आवश्यक था कि शास्त्रानुसार विहित वैतानिक अग्निहोत्र करें तथा अमावस्या और पूर्णिमा पर्व में श्रुति तथा स्मृति से अनुमोदित दस व पौर्णमास यज्ञों को ना छोड़े|
वानप्रसथी के लिए जहां कंदमूल, फल आदि खाद्य हैं , वहीं शरद मधू मालव देश में उत्पन्न भुस्ट्रिं नामक शाक तथा श्लेष्मा आदि अखाद्य है|वानप्रस्थ इको अपने खाद्य पदार्थ को तैयार करने में ओखली- मूसल का व्यवहार भी वर्जित है|वानप्रस्थ ही अपने तप की वृद्धि के लिए पैरों के अग्रभाग पर दिनभर खड़ा रहे तथा ग्रीष्म ऋतु में अपने चारों ओर अग्नि जहां कर और सूर्य के तेज से अपने शरीर को तप्त करें |वर्षा ऋतु में खुले आकाश में खड़ा रहे तथा हेमंत ऋतु में अपने गीले वस्त्रों को पहन कर एक़ वर्ष का काल व्यतीत करें|मनु के अनुसार वानप्रस्थ ही का सबसे बड़ा धर्म अद्वैत-ब्रह्म ज्ञान है, इसके लिए वह उपनिषदों का पाठ करें|वानप्रस्थ ही का कर्तव्य है कि सादा जीवन व्यतीत करते हुए दान का ग्रहण, यज्ञ आदि तथा वेदो उपनिषदों का अध्ययन करें इस काल के उपरांत जीवन तथा संसार में पूर्न निवृत्ति का सन्यास आरंभ होता है| वात्सायन का मत है कि मनुष्य को धर्म, आरती तथा काम का त्रीवर्ग उचित समय के अनुसार सामंजस्य पूर्वक साथ ही साथ पूर्ण करना चाहिए मंहीएमके सामंजस्य पर जोर देते हैं|

वानप्रस्थ को केवल गृह तथा कुल को ही नहीं त्याग देना पड़ता था|बल्कि गांव को भी त्याग देना होता था|मनुस्मृति के अनुसार इंद्रिय संयम, फल फूल पर जीवन निर्वाह मांस मधु का स्पर्श, वल्कल का उपयोग भूमि शयन तथा वृक्ष के नीचे निवास प्राण प्रस्थी के लिए आवश्यक थे|गृहस्थ आश्रम के लिए किए जाने वाले पंच महायज्ञ को वानप्रस्थी भी कर सकता था|मन के अनुसार प्राप्त अन्न में से यथा शक्ती अतिथि सत्कार, नियंत्रण औहार्य तथा दया से युक्त जीवन वानप्रस्थ के गुण हैं|वानप्रस्थ आश्रम में ही यदि मनुष्य की मृत्यु हो जाती है तो उसे ब्रह्म प्राप्त होगा|

जैसा कि मनुष्य के टीकाकार कुल्लूक भट्ट का कथन है कि वह मनुष्य स्वर्ग को प्राप्त होता है|सन्यासी एकाकी और आत्म निर्भर होता है उसका कर्तव्य है कि वह दिन में एक ही बार भिक्षा याचन कर जीवन यापन करें ना मिलने पर मन में किसी प्रकार का क्लेश ना उत्पन्न होने दे |

वर्ण तथा आश्रम व्यवस्था के अंतर्गत समाज का एक संगठन मात्र ही नहीं, उसकी प्रगति का आश्वासन भी है प्रत्येक आश्रम के कुछ ऐसे घृती, क्षमा ,अस्तेय ,शौच, इ नद्रिय निग्रह, धैर्य विद्या सत्य तथा अक्रोध शाश्वत धैर्य है जिनका पालन सभी वर्गो तथा आश्रमों के लिए कल्याकारी है|

संदेश-----

१- प्रजापत्याम निरूपयेस्टी सर्व वेद स दक्षिणाम|आसमानी ग्रीव समारोव्य ब्राह्मण: प्रबेजेद गृहात||जबलोपनिषद -६-३८|
२- मनुस्मृति आ०२, श्लोक २४३,२४६|
३- मनुस्मृति आ०, श्लोक १-३|महाभारत शांतिपर्व ४-२४४|
४-मनुस्मृति-आ० छ: श्लोक सिद्धम् क्षेत्र इदम् पुष्पम एवं एवाशरमो महान|
५- मनुस्मृति आ० श्लोक ४ से लेकर ३२ तक|
६-मनुस्मृति- आ०६/४ से लेकर ३२वे श्लोक तक|
७- मनुस्मृति- ६/६० टीका में कुल्लूक भट्ट ने कहा है स: मोकच्ययोगी भवति|
८- मनुस्मृति आ०६/९० श्लोक|